Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 5 | ISSUE : 12 | DECEMBER 2019

भारतीय समाश्रवादी विचारधारा का उद्‌भव और विकास

डॉ. राजेश कुमार 'सुमन' [1]

[1] ग्राम+पोस्ट – भेरोखड़ा, थाना – ताजपुर, वार्ड नं0 – 12, जिला – समस्तीपुर, पिन – 848130

ABSTRACT:

KEYWORDS:

भारतीय इतिहास में आचार्य नरेन्द्रदेव का स्थान अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण रहा है। उनका समाजवादी सिद्धांत आज के विचारकों एवं चिन्तकों के लिए काफी उपयोगी है। उनके विचार में समाजवाद मौजूदा समाज की प्रचीन दासता, विषमता और असहिष्णुता को हमेशा के लिए दूर कर एक ऐसे समाज की स्थापना करना है जो शोषणमुक्त हो, जिसमें परस्पर विरोधी शोषक और शोषित आर्थिक वर्ग मिट जाएँ, जो सहयोग के आधार पर संगठित व्यक्तियों का सच्चा लोकतंत्र बने, ऐसा समूह बने, जिसमें एक व्यक्ति की उन्नती करते हुए जीवन व्यतीत कर सकें, और समता स्वतंत्रा और भ्रातृत्व की स्थापना हो। उनके विचार में समाजवाद एक ऐसा सिद्धांत है जो मानव को विवशता के क्षेत्र से उपर उठकर उसे स्वाधीनता के राज्य में ले जाता है, जो चाहता है कि मनुष्य अपनी असमर्थता से ऊपर उठकर सामाजिक विकास का नियंत्रण कर सके।[1] उनकी धारणा थी कि समाजवाद एक स्वतंत्र सुखी समाज में सम्पूर्ण स्वतंत्रण मनुष्यत्व कर सकता है। उनके अनुसार मानवता हीं समाजवाद का आधार है तथा यही श्रेणीविहीन नैतिकता तथा सामाजिक न्याय की स्थापना कर स्वतंत्रता, समता और भ्रातृत्व के आधार पर एक सुन्दर सबल मानव सृष्टि की सृष्टि कर सकता है, और व्यक्तित्त्व के पूर्ण विकास को संभव बना सकता है। उनकी सोच थी कि समाजवादी समाज में भी समाज के सदस्यों में शारीरिक और मानसिक अन्तर रहेगा, समाज के भीतर विभिन्न कार्यों को सुचारू रूप से चलाने के लिए श्रमविभाजन मौजूद रहेगा। इस लिए समाज में पूर्ण एकरूपता तथा पूर्ण समानता लाने का वायदा नहीं किया जा सकता। समाजवाद तो कृत्रिम असमानताओं को दूर कर सबको अवसर की समानता प्रदान करना चाहता है, वह समता के नाम पर स्वतंत्रता को न्योछावर नहीं करना चाहता, वह तो समता और स्वतंत्रता के समुचित समन्वय की हीं करता है।[2]

एक भाषण में जयप्रकाश नारायण ने कहा था– आज की राजनीति में विश्रृंखलता फैलायी जा रही है। दलों पर आदर्शों के विस्तार की अपेक्षा उनका स्वार्थपूर्ण दृष्टिकोण, आदर्शों का अवमूल्यन, व्यक्तिगत तथा विशेष हितों के लिए दल निष्ठा का परिवर्तन, विधायकों का क्रय–विक्रय, दल की आंतरिक अनुशासन हीनता, दलों के बीच अवसरबादी मित्रता तथा सरकार की अस्थिरता आदि आज के ज्वलंत प्रश्न है।[3]

लोकतंत्र के लिए संविधानों, शासन प्रणाली दलों और चुनावों इन सभी बातों का महत्त्व होता है। जनता में जब तक नैतिक मूल्यों और आध्यात्मिक गुणों का समुचित विकास नहीं हो जाता, तब तक ये वांछित फल नहीं दे सकती। जसप्रकाश की दृष्टि में आधुनिक पद्वति अनुपयुक्त है। यह दलगत राजनीति पर कार्य करती है। अनुभव यह बताता है कि आज के व्यापक निर्वाचनों से गोलमाल फैलायी जाती है, मतदाता की अपेक्षा दलों और प्रचार साधनों के पीछे निहित शक्ति तथा हितों का प्रतिनिधित्व होता है।[4] नौकरशाही दिन–रात बढ़ती जा रही है। प्रशासन का रबैया सेवक न होकर स्वामी का होता जा रहा है।

जयप्रकाश नारायण आधुनिक लोकतंत्र में राजनीतिक दलों की भूमिका से असंतुष्ट थे। दलगत राजनीतिक जनता के नैतिक चरित्र को गिराती है। राजनीतिक दल और उसकी कार्यपद्धति के आगे जनता असहाय सी बन गई है। लोकतंत्र का वास्तविक आधार जन उपक्रम है। दुर्भाग्य की बात है कि जनता को अपने ऐच्छिक कार्यों के लिए सही रूप से प्रोत्साहित नहीं किया जाता वर्तमान दलगत राजनीति नैतिकता को दबानेवाली षड़यंत्रों को प्रोत्साहि करनेवाली है।[5] राजनीतिक दल जनता को विभाजित करते है। आधुनिक राजनीतिक दल तो वास्तव में राजनीतियों का एक ऐसा छोटा शक्तिशाली समूह है जो जनता के नाम से शासन करते हुए लोकतंत्र एवं स्वशासन का भ्रम फैलाता है। इस लोकतंत्र का एक बड़ा अभिशाप यह है कि इसमें सामाजिक कल्याण के लिए राजकीय सत्ता पर निर्भर रहना पड़ता है। दलीय पद्धति जनता को अनुप्रेरित नहीं करती उसके वास्तविक शक्ति का विकास नहीं करती तथा उसमें उपक्रम को प्रोत्साहित नहीं करती। उनके अनुसार आज का भारत लोकतंत्र नहीं वल्कि दलतंत्र है, जहाँ पर धन, संगठन और प्रचार पर आधारित राजनीतिक दल लोगों पर शासन करता है। संसद से लेकर ग्राम पंचायत तक वास्तविक लोकतंत्र के सृजन के लिए अन्य लोगो में नागरिकता की भावना पैदा करने के लिए हर स्तर पर एक सत्याग्रह चलाया जाना चाहिए।6 राजनीतिक दलों को स्वयं एक आत्मनिरोधक अध्यादेश पास कराना चाहिए जिसमें जन इच्छाओं तथा आवश्यकताओं के अनुकूल ही नही उसके प्रत्यक्ष नियंत्रण में हो।

जयप्रकाश नारायण द्वारा प्रस्तावित यह निर्वाचन प्रद्धति ग्रामसभा को प्रशासकीय मशीनरी का मूल आधार मानकर चलती है। और लोकतंत्र के ऊपरी स्तर को निम्न स्तर से मिलती है। स्वयं जयप्रकाशजी का मानना है कि यह ग्रामसभाओं को स्थानीयता से ऊपर उठाती है और उन्हें सम्मान, शक्ति एवं महत्त्व प्रदान करती है। हर वयस्क नागरिक मतदाता परिषद और आमसभा के माध्यम से निर्वाचन में संगठित रूप से भाग ले सकता है। यह उचित होगा कि प्रत्येक ग्राम सभा की बैठक में प्रत्येक उम्मीदवार को मिलनेवाले मतों को नोट किया जाय ताकि पूरे निर्वाचन क्षेत्र की विभिन्न ग्राम सभाओं की बैठक में प्रत्येक उम्मीदवार के प्राप्त मत को गिना जा सके और सर्वाधि कमत प्राप्त व्यक्ति उस निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधि है।[7]

यद्यपि जसप्रकाश नारायण दल निरपेक्ष लोकतंत्र के समथक थे। मतदाताओं के कर्तव्य मतदान के साथ ही समाप्त नहीं हो जाता, वरन् निर्वाचित प्रतिनिधि और मतदाता के बीच नियमित संपर्क रहना चाहिए, ताकि वे परस्पर उत्तरदायित्त्व का सही ढ़ंग से निर्वाह कर सके।

वर्ष 1954 से ही जयप्रकाश नारायण दलीय राजनीति से सर्वथा विमुख रहे। 1974 के अप्रील में जनतंत्र के रूप में एक दिन निर्दलीय संगठन अस्तित्त्व में आया। जयप्रकाश नारायण की प्रेरणा से 1973 के प्रारंभ में लगभग कुछ प्रमुख बुद्धिजीबी राजधानी में एकत्रित हुए और एक निर्दलीय संगठन बनाने की बात उठी। 13 अप्रील 1974 को जयप्रकाश के नेतृत्त्व में राजधानी के गाँधी शांति प्रतिष्ठान की सभाकक्ष में जनतंत्र समाज उद्‌घाटन जयप्रकाश नारायण द्वारा किया गया।[8]

महात्मा गाँधी जयप्रकाश बाबू को भारतीय समाजवाद पर बसबे बड़ा

अधिकारीक विद्वान मानते थे। एक स्थान पर उन्होने स्वयं लिखा है कि समाजवाद एक व्यक्तिगत आचार सहिंता न होकर सामाजिक संगठन की एक प्रणाली है। सामाजिक संगठन का उद्देश्य है कि पद संस्कृत एवं अवसर की विषमताओं को दूर किया जाय, जीवन की श्रेष्ठ वस्तुओं के कष्टमय अध्ययन वितरण को खतम किया जाय और उस दशा को समाप्त किया जाय, जिसमें अधिकांश व्यक्ति गरीबों, भूख, गंदगी, रोग एवं अज्ञान का जीवन बसर करते है और कुछ थोड़े से लोग आराम, संस्कृत, पद और सत्ता का आनंद उठाते है।[9]

समाजवाद भारतीय संस्कृति का विरोधी नहीं है। भारतीय संस्कृति के मूल्यों को पूरी तरह सुरक्षित रखते हुए भी इस देश में समाजवाद लाया जा सकता है। भारत में बंधुत्व और सहयोग को सदैव सर्वोपरि सम्मान दिया गया है। प्राचीन भारत का ग्राम्य चरित्र बहुत कुछ समाजवादी था। भारतीय संयुक्त परिवार प्रणाली और जाति परस्पर में हमें समाजवादी उदार प्रवृत्तियों के लक्षण दिखाई देते है। यद्यपि समाजवाद के संगठित सिद्धांतों का निर्माण पश्चिम में हुआ है, फिर भी इसमें निहित आधारभूत आदर्शवाद भारतीय संस्कृति का भी एक अंग है।

जयप्रकाशजी के भाषणों से एक संपूर्ण क्रांति की बहुत व्यापक व्याख्या की गई है। उनके अनुसार यह संघर्ष सिर्फ सीमित उद्देश्य के लिए नही हो रहा है। उनके उद्देश्य तो बहुत दूरगामी है। भारतीय लोकतंत्र को वास्तविक तथा सुमृढ़ बनाना, जनता का सच्चा राज्य कायम करना, समाज में अन्याय तथा शोषण आदि का अंत करना, एक नैतिक सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक क्रांति करना, नया बिहार बनाना तथा अंततः नया भारत बनाना रहा है।[10]

उपर्युक्त बिवेचन से स्पष्ट होता है कि समाजवादी समाज में भी समाज के सदस्यों में भी शारीरिक और मानसिक अंतर रहेंगे हीं। समाजवाद यह करेगा कि वह शोषक वर्ग का अंत कर असमानता का आर्थिक आधार नष्ट करेगा और सबों को अवसर की समानता प्रदान करेगा।

REFERENCES

1. लाल मुकुट बिहारी – आचार्य नरेन्द्रदेव युग और नेतृत्त्व, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, 1987, पृष्ठ – 223
2. उपर्युक्त – पृष्ठ – 224
3. 1970 के फरवरी में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के दीसान्त समारोह में जयप्रकाश नारायण का वाक्य था।
4. जयप्रकाश नारायण – सोशिलज्म, सर्वोदय एण्ड डेमोक्रेसी, पृष्ठ – 215
5. जयप्रकाश नारायण – पिपुल्स भॉलेन्ट्री एक्टिविटी दूज द फाउण्डेशन ऑफ डेमोक्रेसी, पृष्ठ – 6
6. जयप्रकाश नारायण – सोशिलज्म सर्वोदय एण्ड डेमोक्रेसी, पृष्ठ – 28
7. सप्ताहिक दिनमान – 21.04.1974, पृष्ठ – 18
8. प्रणव प्रेमी – भारत में सामाजिक आंदोलन, आई0बी0आर0जे0 प्रकाशन, दिल्ली, 2018, पृष्ठ – 11
9. जयप्रकाश नारायण – सोशलिज्म, पृष्ठ – प्राक्कथन।
10. भारत में सामाजिक आंदोलन, उपर्युक्त, पृष्ठ – 13